विचार बिन्दु

जीवन का एक क्षण करोड़ स्वर्ण मुद्राएं देने पर भी नहीं मिलता। –चाणक्य

दुनिया में वृद्धजनों की बढ़ती आबादी पर ध्यान देने का वक़्त

बुढ़ापा क्या है और वह किस उम्र से शुरू होता है इस बारे में शोधकर्ताओं के बीच भारी असहमति है। एक नया सर्वेक्षण बताता है कि बुढ़ापे का अध्ययन करने वाले विशेषज्ञों के बीच इसकी मौलिक प्रकृति के बारे में नाटकीय रूप से अलग-अलग विचार हैं। वृद्धावस्था जीवन की अनिवार्य प्रक्रियाओं में से एक है मगर उसे समझने के लिए अध्ययन में लगे वैज्ञानिक इस बात पर भी सहमत नहीं हो पा रहे हैं कि वे वास्तव में क्या अध्ययन कर रहे हैं। हार्वर्ड मेडिकल स्कूल में हुई एक रिसर्च कॉन्फ्रेंस में 100 से अधिक विशेषज्ञों पर यह सर्वे किया गया था जिसमें उम्र बढ़ने के बुनियादी सिद्धांतों पर शोधकर्ताओं के बीच व्यापक असहमति उजागर हुई। इन विशेषज्ञों में 29.8 प्रतिशत प्रोफेसर, 25 प्रतिशत पोस्ट-डॉक्टरल फैलो, 22.1 प्रतिशत स्नातक छात्रों के साथ 13.5 प्रतिशत अन्य शोधकर्ता शामिल थे। उन्होंने बुढ़ापे के मौलिक प्रश्नों पर उल्लेखनीय रूप से अलग-अलग विचार व्यक्त किए। लगभग 30 प्रतिशत ने उम्र बढ़ने के साथ काम करने की शक्ति के क्षय के रूप में बुढ़ापे को परिभाषित किया, जबकि अन्यों ने इसे शरीर के क्षय के संचय, मृत्यु दर में वृद्धि और यहां तक कि एक सामान्य विकासात्मक चरण के रूप में देखा। वृद्धावस्था की शुरुआत किस उम्र से होती है, यह सवाल भी उतना ही विवादास्पद साबित हुआ। जबकि 22 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना था कि 20 साल की उम्र के बाद ही मनुष्य बुढ़ापे की तरफ बढ़ना शुरू कर देता है, वहीं 16.5 प्रतिशत लोगों का कहना था कि बुढ़ापा तो बच्चे के गर्भ में आने के साथ ही शुरू हो जाता है। अन्यों ने उसे प्रारंभिक विकास के दौरान या जीवन के विभिन्न चरणों में शुरू होने वाला माना। यह जानना दिलचस्प है कि किसी भी एक उत्तर को बहुमत का समर्थन नहीं मिला। वास्तव में राय की यह विविधता उम्र बढ़ने पर शोध करने के तरीकों को भी उजागर करती है। उम्र बढ़ने की अलग-अलग परिभाषाएं स्वाभाविक रूप से अलग-अलग प्रयोगात्मक दृष्टिकोण और शोध प्राथमिकताओं को इंगित करती हैं। उदाहरण के लिए, जो वैज्ञानिक उम्र बढ़ने को मुख्य रूप से शरीर के क्षय के रूप में देखते हैं, वे कोशिका क्षति को रोकने या उसकी मरम्मत करने पर ध्यान केंद्रित करते हैं, जबकि जो इसे कार्यात्मक गिरावट के रूप में देखते हैं, वे शारीरिक क्षमताओं को बनाए रखने को प्राथमिकता देते हैं।

क्या बुढ़ापे को बीमारी माना जाय, इस सवाल पर भी विशेषज्ञों में मतभेद था। सबसे आम जवाब था 'तटस्थ', जिसके बाद लगभग बराबर संख्या में लोग सहमत और असहमत थे। इस दार्शनिक विभाजन का इस बात पर महत्वपूर्ण प्रभाव हो सकता है कि बुढ़ापे का किस तरह से इलाज किया जाता है और क्या चिकित्सकीय हस्तक्षेप को उपचार या निवारक उपायों के रूप में विकसित किया जा सकता है। एकमात्र बिंदु जिस पर वैज्ञानिक मामूली सहमत नजर आए वह था बुढ़ापे की एक मानक परिभाषा की आवश्यकता - हालांकि यहां भी, लगभग आधे लोग तटस्थ रहे या असहमत रहे। ऐसा माना जा रहा है कि इस मौलिक असहमति का अनुसंधान की दिशाओं और उपचार दृष्टिकोणों के लिए महत्वपूर्ण निहितार्थ हो सकते हैं। इन मतभेदों के बावजूद इस बात पर सहमती थी कि बुढ़ापा एक पहचान योग्य घटना के रूप में मौजूद है, कि यह स्वाभाविक रूप से हानिकारक है, और इसमें हानिकारक परिवर्तन या शरीर का क्षय शामिल है। इस बात पर आमसहमति थी कि बुढ़ापे को संभावित रूप से लक्षित कर संशोधित किया जा सकता है। इसके सर्वोत्तम तरीके क्या हो सकते हैं उस पर विचारों की अवश्य भिन्नता थी। शोध टोली के अनुसार "ज्यादातर वैज्ञानिकों को लगता है कि वे उम्र बढ़ने की प्रकृति को समझते हैं, लेकिन जाहिर तौर पर उनकी समझ अलग-अलग है।" विचारों का यह मतभेद इस क्षेत्र के लिए चुनौती और अवसर दोनों प्रस्तुत करता है। हालांकि यह स्थिति सहयोग और आम सहमति बनाने को जटिल बना सकती है, लेकिन यह उम्र बढ़ने की प्रक्रिया को समझने और संभावित रूप से चिकित्सकीय हस्तक्षेप करने के लिए दृष्टिकोणों की विविधता भी सुनिश्चित करती है।

आज दुनिया भर में लोग लंबे समय तक जी रहे हैं। अब ज़्यादातर लोग साठ साल या उससे ज़्यादा जीने की उम्मीद कर सकते हैं। दुनिया के हर देश में आबादी में बुज़ुर्गों के आकार और अनुपात में वृद्धि हो रही है। चिकित्सा व आबादी विशेषज्ञ तथा समाजशास्त्री मानते हैं कि 2030 तक दुनिया में 6 में से 1 व्यक्ति 60 वर्ष या उससे अधिक आयु का होगा। इस समय 60 वर्ष या उससे अधिक आयु की आबादी का हिस्सा जो 2020 में एक बिलियन था, वह बढ़कर 1.4 बिलियन हो जाएगा। 2050 तक दुनिया में 60 वर्ष या उससे अधिक आयु के लोगों की आबादी दोगुनी अर्थात 2.1 बिलियन हो जाएगी। 80 वर्ष या उससे अधिक आयु के लोगों की संख्या 2020 और 2050 के बीच तिगुनी होकर 426 मिलियन तक पहुंचने की उम्मीद है। जनगणना 2011 के अनुसार, भारत में 104 मिलियन वृद्ध लोग 60 वर्ष से अधिक के हैं, जो कुल जनसंख्या का 8.6 प्रतिशत हैं। भारत में 60 वर्ष से अधिक उम्र के वृद्धों में महिलाओं की संख्या पुरुषों से अधिक है। भारत सरकार की राष्ट्रीय वृद्धजन नीति 1999, माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरण-पोषण और कल्याण अधिनियम, 2007 और वरिष्ठ नागरिकों के लिए राष्ट्रीय नीति 2011, वरिष्ठ नागरिकों की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए कानूनी ढांचा प्रदान करती है। आयुष्मान भारत कार्यक्रम के तहत बुजुर्गों के स्वास्थ्य की देखभाल के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम और स्वास्थ्य और कल्याण केंद्र प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल केंद्रों में बुजुर्गों को समर्पित स्वास्थ्य सेवा प्रदान करते हैं। पिछले कुछ वर्षों में, चिकित्सा विज्ञान ने वरिष्ठ नागरिक श्रेणी के भीतर एक नए समूह की पहचान की है, जिसका नाम है 'सुपर-एजर्स'। यह शब्द 70 और 80 का दशक पूरा कर चुके लोगों को संदर्भित करता है। दुनिया भर में अब इस 'सुपर एजर्स' पर उनके व्यवहार, आदतों और स्वास्थ्य संकेतकों का दीर्घकालिक अध्ययन हो रहे हैं। मनोभ्रंश और संज्ञानात्मक गिरावट वाले लोगों के अलावा, स्वस्थ वृद्ध लोग शोधकर्ताओं के लिए रुचि का विषय हैं। जबकि सामान्य स्वास्थ्य, पारिवारिक इतिहास, मनोसामाजिक पहलुओं का भी अध्ययन किया जा रहा है ताकि समुदाय-आधारित बेहतर और लक्षित एकीकृत-देखभाल को उनकी जरूरतों के अनुसार डिजाइन की जा सके। कोशिश यह की जा रही है कि प्रभावी समन्वय और दीर्घकालिक देखभाल प्रणालियों को उस आबादी के अनुकूल बनाया जा सके लिए जो वृद्ध और सुपर-एजिंग के दौर में हैं, महत्वपूर्ण हैं। इसमें हर प्रकार के समाज की जरूरतों को ध्यान में रखा जा रहा है। विशेषज्ञ मानते हैं कि कोई भी वृद्ध सामान्य व्यक्ति नहीं होता। कुछ 80 वर्षीय लोगों की शारीरिक और मानसिक क्षमताएँ 30 वर्षीय लोगों जैसी ही होती हैं। अन्य लोगों में बहुत कम उम्र में ही क्षमताओं में महत्वपूर्ण गिरावट देखी जाती है। इससे वृद्ध लोगों के अनुभवों और आवश्यकताओं की श्रृंखला को संबोधित करती हुई एक व्यापक सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रतिक्रिया की ये विशेषज्ञ वकालत करते हैं। लोगों के भौतिक और सामाजिक वातावरण और उनके अवसरों और स्वास्थ्य व्यवहार पर उनके वातावरणों का प्रभाव वृद्धावस्था में देखी जाने वाली विविधता का एक बड़ा हिस्सा होता है। पर्यावरण के साथ व्यक्तिगत विशेषताओं जैसे कि परिवार, लिंग और हमारी जातीयता भी स्वास्थ्य में असमानताओं के कारक बनती हैं। वृद्ध लोगों को अक्सर कमज़ोर या आश्रित तथा समाज के लिए बोझ माना जाता है। सार्वजनिक स्वास्थ्य पेशेवरों और समग्र रूप से समाज को इन और अन्य आयुवादी दृष्टिकोणों को उन मुद्दों पर ध्यान देने की आवश्यकता है जो उम्रदराज लोगों के साथ भेदभाव का कारण बन सकते हैं तथा सार्वजनिक नीतियों को प्रभावित कर सकते हैं।

पर्यावरण के साथ व्यक्तिगत विशेषताओं जैसे कि परिवार, लिंग और हमारी जातीयता भी स्वास्थ्य में असमानताओं के कारक बनती हैं। वृद्ध लोगों को अक्सर कमज़ोर या आश्रित तथा समाज के लिए बोझ माना जाता है। सार्वजनिक स्वास्थ्य पेशेवरों और समग्र रूप से समाज को इन और अन्य आयुवादी दृष्टिकोणों को उन मुद्दों पर ध्यान देने की आवश्यकता है जो उम्रदराज लोगों के साथ भेदभाव का कारण बन सकते हैं तथा सार्वजनिक नीतियों को प्रभावित कर सकते हैं।

संयुक्त राष्ट्र (यूएन) महासभा ने 2021-2030 को स्वस्थ उम्र बढ़ने का संयुक्त राष्ट्र दशक घोषित किया हुआ है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की देखरेख में इसका कार्यान्वयन हो रहा है। संयुक्त राष्ट्र का यह दशक मनाना एक वैश्विक सहयोग है जो सरकारों, नागरिक समाज, अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों, पेशेवरों, शिक्षाविदों, मीडिया और निजी क्षेत्र को 10 साल के ठोस, उत्प्रेरक और सहयोगी कार्रवाई करने के लिए एक साथ लाता है ताकि लंबे और स्वस्थ जीवन को बढ़ावा दिया जा सके। यूएनएफपीए (संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष) भारत ने अंतर्राष्ट्रीय जनसंख्या विज्ञान संस्थान (आईआईपीएस) के साथ मिलकर 'भारत एजिंग रिपोर्ट 2023' जारी की थी। यह रिपोर्ट भारत में वृद्धों की देखभाल से जुड़ी चुनौतियों, अवसरों और संस्थागत प्रतिक्रियाओं पर प्रकाश डालती है, क्योंकि भारत में जनसांख्यिकीय बदलाव के कारण अब यहां जनसंख्या वृद्ध होने की तरफ अग्रसर होती जा रही है। यह रिपोर्ट विद्वानों, नीति निर्माताओं, कार्यक्रम प्रबंधकों और बुजुर्गों की देखभाल में शामिल सभी हितधारकों के लिए एक मूल्यवान संसाधन है। बुजुर्गों ने समाज में महत्वपूर्ण योगदान दिया है, और वे अपनी भलाई सुनिश्चित करने के लिए समाज के सर्वोत्तम प्रयासों को पाने के हकदार हैं। रिपोर्ट के मुख्य निष्कर्षों में बुजुर्गों की भलाई से संबंधित कई तरह के विश्लेषण शामिल हैं, जिनमें कुछ हैं:– वरिष्ठ नागरिकों की अनूठी स्वास्थ्य देखभाल आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए वृद्धावस्था देखभाल की व्यवस्था का विस्तार, बुजुर्ग आबादी की स्वास्थ्य, वित्तीय सशक्तीकरण और क्षमता निर्माण आवश्यकताओं को संबोधित करने वाली सरकारी योजनाओं और नीतियों का निर्माण, कंप्यूटर और इंटरनेट उपयोग के माध्यम से वृद्धों के डिजिटल सशक्तीकरण में समुदाय आधारित संगठनों की भागीदारी, बुजुर्गों के कल्याण के लिए नीतियों को आकार देने के लिए समर्पित प्रयास तथा सामाजिक सहायता, वृद्धाश्रम और बुजुर्गों के बारे में जागरूकता अभियान के सम्मिलित प्रयासबुढ़ापे को आनंदमय बना सकते हैं।

–अतिथि संपादक,
राजेन्द्र बोड़ा
(वरिष्ठ पत्रकार एवं विश्लेषक)

अमरावती मॉडल दुनिया के देशों को नई दिशा देगा

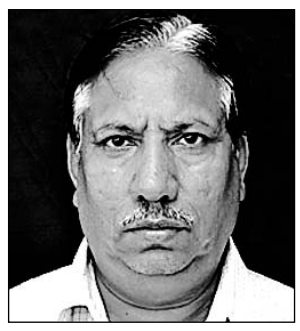

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद शर्मा

ग्रीन एनर्जी को बढ़ावा देने के लिए जहां दुनिया के देशों में टुकड़ो-टुकड़ों में काम हो रहा है वहीं आंध्रप्रदेश की नई राजधानी अमरावती को पूरी तरह से ग्रीप एनर्जी से संचालित शहर बनाने की दिशा में मुख्यमंत्री चन्द्रबाबू नायडू ने काम भी शुरु कर दिया है। अमरावती को पूरी तरह से ग्रीन एनर्जी से संचालित शहर बनाने में करीब करीब 65 हजार करोड़ रुपए की लागत आयेगी और सोलर, पवन और जल विद्युत पर आधारित इस परियोजना में अमरावती में उपयोग आने वाली सारी बिजली रिन्यूवल एनर्जी स्रोत से ही प्राप्त होगी। सर्वाधिक कार्बन उत्सर्जन करने वाली जीवाश्म उर्जा का अमरावती में नामोनिशान नहीं होगा। अपने आप में यह दुनिया के लिए ग्रीन एनर्जी के सपने को अमली जामा पहनाने की बड़ी, महत्वाकांक्षी और दुनिया के देशों के लिए प्रेरणीय पहल मानी जानी चाहिए। कोई इसे इतिहास रचने की बात करता है तो कोई ग्रीन एनर्जी के क्षेत्र में बड़ी और रचनात्मक पहल के रुप में देख रहे हैं। कहा जाए तो दुनिया के देश जिस तरह से ग्रीन एनर्जी के लक्ष्य को लेकर आगे बढ़ रहे हैं और जिस तरह से बड़े-बड़े शिखर सम्मेलनों के साझा घोषणा पत्रों में घोषणाएं होती है उससे अलग हटकर आंध्रप्रदेश के मुख्यमंत्री चन्द्रबाबू नायडू की इस पहल को माना जाना चाहिए।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी स्वयं इस परियोजना की आधारशिला रखने जा रहे हैं। कृष्णा नदी के तट पर आंध्र की नई राजधानी की आधारशिला रखी जाएगी तो ग्रीन एनर्जी का यह प्रोजेक्ट 217 वर्गमीटर को समाये हुए होगा। अमरावती को पूरी तरह ग्रीन एनर्जी युक्त दुनिया का पहला शहर बनाने के लिए 2050 तक की मांग का आकलन कर लिया गया है करीब 2700 मेगावाट विद्युत की आवश्यकता होगी। इसमें स 30 प्रतिशत सोलर और पवन आधारित उर्जा होगी तो 70 प्रतिशत बिजली का उत्पादन पनबिजली आधारित होगी।

ग्रीन एनर्जी के चार प्रमुख स्रोत है। इसमें सूर्य की गर्मी आधारित सोलर उर्जा, हवा के झोकों पर आधारित पवन उर्जा, जल आधारित पन बिजली परियोजना और भूगर्भ के ताप आधारित भूतापीय उर्जा को रिन्यूवल एनर्जी के नाम से जाना जाता है। इसमें प्रमुखता से सोलर, पवन और पन बिजली को लिया जाता है। दरअसल जीवाश्म आधारित उर्जा जिसमें प्रमुखत: कोयला व लिग्नाइट का प्रयोग होता है उसके चलते जलवायु में तेजी से परिवर्तन हुआ है और आज दुनिया के देश तापमान वृद्धि को 1.5 प्रतिशत तक रखने के लिए जूझ रहे हैं। 2 प्रतिशत वृद्धि दर को डेढ प्रतिशत लाना टेड़ी खीर बना हुआ है। पेरिस घौषणा के अनुसार दुनिया के देशों को इसकी जिम्मेदारी सौंपी गई है अन्यथा जलवायु परिवर्तन के जिस तरह के परिणाम हम आये दिन देखने लगे हैं जिसमें तापमान में बढ़ोतरी, ग्लेशियरों का सिकुड़ना, अनपेक्षित मौसम चक्र कभी तेज गर्मी तो कभी तेज सर्दी और कभी तेज बरसात। आंधी तूफान, जंगलों में दावानल, तूफानों चक्रवातों के नए नए रुप और बार बार आवृति हमारे सामने हैं। समुद्र का जल स्तर बढ़ने से समुद्र किनारे के शहरों के सामने अस्तित्व का संकट आ गया है तो जंगलों के दावानलों का असर आसपास के शहरों खासतौर से अमेरिकी शहरों में देखा जा चुका है।

सूखा और बाढ़ आम होती जा रही है तो दवाओं के बेअसर होने और संक्रामक रोगों की बढ़ोतरी सामने हैं। दुनिया के देश खासतौर से मौसम विज्ञानी इन हालातों को लेकर चिंतित है और जलवायु परिवर्तन के नकारात्मक प्रभावों को सीमित करने के उपायों को लेकर प्रयासरत है। हांलाकि इसमें सरकारों की ईच्छा शक्ति, संसाधन, आर्थिक सामाजिक हालात के साथ ही विकसित देशों द्वारा खुले दिल से सहयोग नहीं करना बड़ा कारण बनता जा रहा है।

ऐसा नहीं है कि जलवायु परिवर्तन के संकट से दुनिया के देश सावचेत नहीं हो। बल्कि इस दिशा में किये जा रहे प्रयासों को लेकर रेंकिंग भी जारी होने लगी है। जलवायु परिवर्तन प्रदर्शन रेकिंग में भारत दसवें स्थान पर है हांलाकि यह इससे पहले के साल की तुलना में रेंकिंग पिछड़ी है। मजे की बात यह है कि हालिया सूचकांक के विश्लेषण से साफ हो जाता है कि आज भी इस सूचकांक को एक से तीन नंबर की रेंकिंग वाले देश की प्रतीक्षा है। रेकिंग में डेनमार्क शीर्ष पर है और उसका चौथे स्थान है।

नीदरलैंड, इंग्लेण्ड, फिलिपिन्स, मोरक्को, नार्वे क्रमश: है तो भारत दसवें स्थान पर है। देश में रिन्यूवल एनर्जी की दिशा में ठोस प्रयास हो रहे हैं। गुजरात के कांडला सेज को पूरी तरह से हरित औद्योगिक क्षेत्र बनाया गया है तो तमिलनाडू के महाबलीपुरम के शोर मंदिर को ग्रीन एनर्जी पुरातात्विक स्थल के रुप में पहचान मिल चुकी है। डेनमार्क का कोसेनहेगेन भी इसी श्रेणी में आता है। आस्ट्रेलिया का एडिलेड, कोरिया का सियोल, आइवरकोस्ट का कोकोडी, स्वीडन का मालमो और दक्षिणी अफ्रिका का केपटाउन ग्रीन एनर्जी की दिशा में बढ़ते हुए शहरों में से हैं। गुजरात के कांडला सेज में 1000 एकड में साढ़े तीन लाख पेड़ लगाया गया है। समुद्र के नमक के पानी से प्रभावित क्षेत्र को जलवायु की दृष्टि से करीब-करीब बदल ही दिया गया है।

अमरावती को पूरी तरह से ग्रीन सिटी बनाने की दिशा में जो कार्य आरंभ हो रहा है वह समूची दुनिया के लिए एक मिसाल है। वहां पर सरकारी भवनों के साथ ही अन्य स्थानों पर सोलर पेनल और पवन उर्जा के स्रोत लगाये जाएंगे। पनबिजली परियोजना का संचालन होगा। पूरी तरह से ग्रीन एनर्जी का ही उपयोग होगा। हांलाकि यह अपने आप में चुनौतीभरा काम होगा पर इच्छा शक्ति और कुछ नया करने की भावना से आगे बढ़ा जाता है तो फिर कोई कार्य असंभव नहीं होता है।

हांलाकि केन्द्र व राज्य सरकारे अक्षय उर्जा के इस क्षेत्र में लगातार आगे बढ़ रही हैं। राजस्थान रिन्यूवल एनर्जी उत्पादन के क्षेत्र में समूचे देश में आगे है और भड़ला पार्क जैसे सोलर पार्क यहां विकसित हो चुके हैं। सरकार अब घरों की छतों पर सोलर एनर्जी के उत्पादन को बढ़ावा दे रही है तो खेती में सोलर पंपों और अन्य कार्यों में उपयोग सकारात्मक प्रयास माने जा सकते हैं। पर अमरावती इन सबसे अलग इसलिए हो जाती है कि यहां समग्रता से प्रयास करते हुए समूचे शहर को ग्रीन एनर्जी युक्त बनाया जा रहा है यइ सराहनीय होने के साथ ही प्रेरक भी है।

–डॉ. राजेन्द्र प्रसाद शर्मा,
(वरिष्ठ लेखक)

शिक्षा और समर्पण

रामनिवास बैरवा

पिछले दिनों हिन्दी-अंग्रेजी के कई समाचार पत्रों में एक प्रसंग देखने में आया कि बेगूसराय के किसी ग्रामीण बच्चों की पाठशाला में अध्यापिका के रूप में नौकरी लगने पर कुमारी स्नेहा शर्मा ने अपनी पहली तनख्वाह से उसी स्कूल के 120 गरीब बच्चों के लिए स्कूल बैग, पानी की बोतलें और कॉपी-किताबें खरीद कर बांटीं। बच्चों से भावनात्मक लगाव तथा शिक्षा के लिए उस लड़की का समर्पण निश्चय ही प्रशंसनीय है, वह भी तब जब मास्टरी की नौकरी प्रप्त करने के लिए लोग कई तरह के हथकंडे अपनाते हैं।

एक पौराणिक प्रसंग है, हालांकि उनके पात्रों को नाम याद नहीं आ रहे हैं। उस प्रसंगमें एक गुरू के आश्रम में वनस्पति-विज्ञान और चिकित्सा पद्धति की शिक्षा ले रहे एक शिष्य ने काफी वर्षों की शिक्षा के बाद अपने गुरू से समाज की सेवा के लिए जाने की आज्ञा मांगी । गुरूजी जानते थे कि वह एक होनहार और समर्पित शिष्य है, फिर भी गुरूजी ने उससे कहा- "इस आश्रम के चार योजन की परिधि में ऐसी कोई वनस्पति लेकर आओ जिसका चिकित्सा में कोई उपयोग न हो।" गुरू को प्रणाम करके शिष्य ने प्रस्थान किया। लगभग एक वर्ष बाद में शिष्य ने गुरूजी से कहा कि 'उसे कोई भी वनस्पति निरर्थक नहीं मिली।' तब गुरूजी ने प्रसन्न होकर कहा "तुम्हारी शिक्षा पूरी हो चुकी है, तुम्हारे जीवन में कोई वस्तु निरर्थक नहीं है।"

उपरोक्त अध्यापिका का समर्पण भी इसी प्रकार का है, दायरा बेशक छोटा है। शिक्षा हमेशा से ही किन्हीं उद्देश्यों से प्रेरित रही है। ब्रिटिश राज में शिक्षा के साथ-साथ अपने प्रशासनिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए इसाई मिशनरीज को लगाया था-उसी के जवाब में दयानन्द सरस्वती ने कई स्कूल और कॉलेज खोले, बाल गंगाधर तिलक से प्रेरित हो कर नानाजी देशमुख के पहल करने पर राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ ने भी अपने विद्यालयों की श्रृंखला शुरू की, लेकिन डिग्रियां देने वाले विश्वविद्यालय सरकारी स्तर पर ही शुरू किये गये-बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय (1916) और अलीगढ़ मुस्लिम विश्व विद्यालय (1920) को भी बाद में आवासीय विश्वविद्यालय के रूप में मान्यता दी गई। उनसे निकले विद्यार्थियों का अपना ही समर्पणभाव होता था, उनका अपना ही नैतिक स्तर होता था।

लेकिन, 1970-1980 के दशकों में समर्पण और नैतिकता ने सिर्फ डिग्रियां प्राप्त करने में बदल गया। मुझे याद है, उन वर्षों में कई निजी स्कूल, कॉलेज खोले गये थे जो आम तौर पर मैट्रिक या इंटर-मिजिएट के सर्टिफिकेट दिलवाने की व्यवस्था करते थे और कॉलेजों के माध्यम से स्नातक की फर्जी डिग्रियां दिलवाने का काम करते थे। जब, वैश्वीकरण का दौर चला और सरकारों ने अपने खर्चों में 30 प्रतिशत की अनिवार्य कटौतियां करने के लिए नये स्कूल-कॉलेज खोलना कम कर दिया और अध्यापकों-शिक्षकों की नियुक्तियां भी कम कर दीं।

ऐसी सीमित नौकरियों के दौर में अच्छे प्राप्तांकों और अच्छी विशिष्ट डिग्रियों की आवश्यकता पड़ी, तब निजी विश्वविद्यालयों की स्थापना की इजाजत राज्य सरकारों ने देनी शुरू की। 1990 के दशक में रायपुर के एक ही मोहल्ले में बीस से अधिक विश्वविद्यालय खोले गये। यह शिक्षा के प्रति समर्पण के विपरीत सभी तरह का पतन था। इससे दुखी होकर उस समय के प्रख्यात शिक्षाविद् प्रो. यशपाल ने ऐसे विश्वविद्यालय खोले जाने को, यू.जी.सी. के शैक्षिक विषयवस्तु और संसाधनगत मापदण्डों की पालना नहीं करने के आधार पर सुप्रीम कोर्ट में चुनौती दी। सुप्रीम कोर्ट ने ऐसे निजी विश्वद्यिालयों की स्थापना को अवैध माना। बाद में केंद्रीय सरकार ने यू.जी.सी. के निर्धारित मापदण्डों में कुछ छूट दी जिसके उपरांत हरेक छोटे-बड़े शहरों में सैकड़ों विश्वविद्यालय राज्य सरकारों की विधानसभाओं के द्वारा पारित अलग-अलग कानूनों के द्वारा स्थापित किये गये। क्या इससे यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है कि जो 1970-80 के दशकों में फर्जी डिग्रियां दिलवाने का काम करते थे, अब उन्हें खुद ही डिग्रियां बनाने के विश्वविद्यालय बनाने की इजाजत राज्य सरकारों ने विधान सभाओं में कानून पारित करवा कर देनी शुरू करवा दी, चाहे वे डिग्रियां असली हों या फर्जी। इस तथ्य से कोई सहमत हो या नहीं, लेकिन आज फर्जी डिग्रियों के कितने मामले सामने आ रहे हैं, यह किसी से छुपा नहीं है। सत्य को मूंदे रहेगी शब्द की कब तक पिटारी।

निजी विश्वविद्यालयों के अस्तित्व में आ जाने के पश्चात् सरकारी विश्वविद्यालय भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारियों के लिए चारागाह बना दिये गय हैं, वाइस चांसलर बनाने के लिए या तो ऐसे व्यक्तियों को नियुक्त किया जाने लगा जिनका शिक्षा की तुलना में राजनीतिक समर्पण ज्यादा होता है, या समय पर वाइस चांसलर नियुक्त नहीं किये जाने पर आई.ए.एस. अपने में से ही किसी को वाइस चांसलर बना लेते हैं। ऐसे में उत्कृष्ट श्रेणी के सरकारी विश्वविद्यालय भी कैसे होंगे, अनुमान लगाया जा सकता है। मेरे एक वरिष्ठ अधिकारी थे, पश्चिम बंगाल से, स्वर्गीय श्री ए.एन. रॉय। बातों-बातों में एक बार उन्होंने पश्चिम बंगाल के पहले मुख्यमंत्री डा. विधानचंद्र रॉय से जुड़ा प्रसंग सुनाया था। पश्चिम बंगाल के मंत्रीमंडल में किसी योजना या किसी कार्यक्रम को शुरू करने का फैसला लिया गया और तब के अपने मुख्य सचिव को उसे लागू करने के लिए कहा। कुछ समय बाद मंत्रीमंडल की बैठक में उस विषय की प्रगति की जानकारी मांगी गई, तब मुख्य-सचिव ने कहा कि उस योजना या कार्यक्रम में काफी पैसा खर्च करना था, जिसके लिए कोई नियम-कानून नहीं होने के कारण उस पर काम नहीं किया जा सका। फिर मुख्य सचिव ने आगे कहा कि अगर सरकार विधानसभा से इस मामले पर नियम-कानून बनवा देती है तो उस योजना पर काम किया जा सकता था। डॉ. विधानचंद्र रॉय जानते थे कि उस मसमले के लिए कोई कानून नहीं बनाया जा सकता था, अत: उस योजना या उस कार्यक्रम को वहीं पर खतम कर दिया गया।

क्या आज कोई किसी भी स्तर का आई.ए.एस. है जो राज्य मंत्रीमंडल से अनुमोदित किसी योजना को लागू करने से इतने सशक्त तरीके से मनाकर दे? आज तो एक दागी एम.एल.ए. भी कुछ करने के लिए कह दे तो आई.ए.एस. या आई.पी.एस. जैसे भी हो, अपने उस एम.एल.ए. की आज्ञा का पालन करके ही रहते हैं। मुख्यमंत्री कुछ करने के लिए कह दे तो बात सर्वोपरि हो जाती है। बजट घोषणाएं तो जैसे संविधान के दिशा-निर्देशों से भी ऊपर होती हैं, उनके लिए। क्योंकि... आई.ए.एस., आई.पी.एस. जन-सेवा, कानूनों का पालन करने की तुलना में उपलब्ध सुख-सुविधाओं का लाभ लेने के लिए बनते हैं, बनना चाहते हैं। इसके लिए, कुछ अपवादों को छोड़कर, जैसे भी हो, जितना भी पैसा खर्च करना पड़े, करते हैं, आई.ए.एस. और आई.पी.एस. बनने के लिए। आखिर किये गये खर्चों को भी तो वापस वसूलना है। इन सबके बावजूद जो आई.ए.एस. चयन परीक्षा में सबसे ऊपर होता है उसके प्राप्तांक 50 प्रतिशत के आस-पास ही होते हैं, मेरिट में उनसे नीचे के चयनितों के प्राप्तांक कितने होंगे, सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। 1000-1100 चयनितों के न्यूनतम प्रप्तांक 35 प्रतिशत के आस-पास ही होते हैं। ऐसे में उनकी क्षमता, उनकी अभिलाषा और उनकी दक्षता क्या होगी? उन्हीं में से और भी निचले स्तर के चयनितों को आई पी एस बनाया जाता हैं। आई पी एस अधिकारियों के आम जनता से संपर्क की व्यापकता को देखते हुए उनके ज्ञान, उनके विवेक, उनकी संवेदना और उनका समर्पण उच्चस्तर का होना अपेक्षित है जो कि आमतौर पर नहीं पाया जाता है। उन्हें तो सिर्फ आई.ए.एस., आई.पी.एस. बनना है और संयोग से उन्हीं में से कोई किसी यूनिवर्सिटी का वाइसचांसलर भी बनता है तो शिक्षा का क्या हस्र होगा, सहज ही अनुमान ही लगा सकते हैं।

इन्हीं प्रशासनिक अधिकारियों की देख-रेख में अध्यापक-गण अन्य सामान्य प्रशासनिक काम करने के लिए लगाये जाते हैं, ऐसे में बच्चों को पढ़ाने में समर्पण कहां से आयेगा उनमें। यही वजह है कि विभिन्न भर्ती परिक्षाओं के पर्चे धड़ल्ले से बेचे जाते हैं और अपने चहेतों की भर्ती की सम्भानाएं कम होने पर भर्ती-परीक्षाओं के अन्तिम परिणामों को सम्भवत: अपने स्तर पर और विशेष परिस्थितियों में, अदालतों के माध्यम से स्थगित करवा दिया जाता है। ऐसे में नौकरियों की उम्मीद में बैठे प्रत्याशी क्या करेंगे? या तो वे अपराधियों के चंगुल में फंसेगे या नेताओं-अफसरों के चक्कर लगायेंगे- और प्रशासन की निष्ठुरताओं का अनुभव प्राप्त करते हैं, तब उनमें शिक्षा के प्रति समर्पण कैसे आयेगा? प्रतिदान वही होता है, जो कि मिला होता है।

–रामनिवास बैरवा,
पूर्व क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त

पर्यावरण जागरूकता के तहत पौधे वितरित

शाहपुरा, (निसं)। विश्व पर्यावरण दिवस के अवसर पर महाप्रभु स्वामी रामचरण कन्या विद्यापीठ संस्थान, शाहपुरा में पर्यावरण जागरूकता के तहत पौधा एवं इको फ्रेंडली सीड बॉल वितरण कार्यक्रम आयोजित किया गया। इस आयोजन की मुख्य सूत्रधार रही राजस्थान की पर्यावरण प्रहरी के रूप में विख्यात 'ग्रीन लिटिल बेबी' श्रेया कुमावत, जिन्होंने अपने समर्पण और संकल्प से सभी को प्रेरित किया।

कार्यक्रम में नगर परिषद के सभापति रघुनंदन सोनी, भाजपा नगर अध्यक्ष पंकज सुगंधी, नगर महामंत्री जितेंद्र परासर बतौर मुख्य अतिथि उपस्थित रहे। संस्थान के प्राचार्य डॉ. ओमप्रकाश कुमावत ने अतिथियों का स्वागत कर कार्यक्रम की भूमिका प्रस्तुत की और ग्रीन लिटिल बेबी का परिचय देते हुए उनकी पर्यावरणीय सेवाओं को रेखांकित किया। शुभारंभ में . शिक्षिकाओं एवं छात्राओं द्वारा श्रेया का भव्य स्वागत किया गया। कार्यक्रम में ग्रीन लिटिल बेबी ने कपड़े से बनी पोटलियों में हर्बल मेडिसिन, फलदार, छायादार व सब्जियों की लताओं के बीजों से बनी इको फ्रेंडली सीड बॉल्स वितरित की। विद्यार्थियों एवं अतिथियों को पौधों के साथ इन सीड बॉल्स के उपयोग की जानकारी भी दी गई। उन्होंने कहा, पेड़ केवल हरियाली नहीं, हमारे अस्तित्व की सांस हैं। ऑक्सीजन, छाया और स्वच्छता-तीनों के वाहक यही वृक्ष हैं।

श्रेया ने बताया कि आगामी जुलाई में अपने 13वें जन्मदिवस पर वे 25 से 30 हजार सीड बॉल्स का वितरण शाहपुरा क्षेत्र के सभी विद्यालयों, बस स्टैंड, रेलवे प्लेटफॉर्म व सार्वजनिक स्थलों पर करेंगी। यह जिले का अब तक का सबसे बड़ा जन-सहभागिता अभियान होगा। उनकी बाल टीम दिन-रात सीड बॉल निर्माण में जुटी है। कार्यक्रम का संचालन ज्योति शर्मा ने किया। इस अवसर पर ओम प्रकाश वर्मा, बृजेश शर्मा, लेखराज पाराशर, बालूराम कुमावत, रामधन कुमावत, नरेश व्यास सहित अनेक गणमान्य नागरिक उपस्थित रहे। इस पहल की सर्वत्र सराहना की जा रही है और यह अपेक्षा की जा रही है कि 'ठाीन लिटिल बेबी' की यह हरित यात्रा जन-जन को जोड़ते हुए पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में नया कीर्तिमान स्थाप